Akshardhara Research Journal
Single Blind Peer-Reviewed & Refereed International Research Journal
E ISSN -3048-8095 / Bimonthly / SJIF Impact- 3.4 September-October 2025 / VOL -02 ISSUE-II

05

'सुनो भाई साधो' के आलोक में कबीरदास के समाज दर्शन की प्रासंगिकता

अनिल कुमार प्रजापति
शोधार्थी, हिंदी विभाग
दिग्विजयनाथ स्नातकोत्तर महाविद्यालय,गोरखपुर
संबद्ध-दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर, उत्तर प्रदेश

सारांश –

भारतीय ज्ञान की समृद्ध परंपरा के मूल में भारतीय दर्शन सामाजिक सभ्यता तथा संस्कृति के नीव के रूप में प्रतिस्थापित है। भारतीय दर्शन विश्व का प्राचीनतम दर्शन होने के साथ मानवता से युक्त विश्व निर्माण का साक्षी भी रहा है। वैदिक काल से मध्यकाल तक की लंबी यात्रा में विभिन्न ऋषि- मुनि तथा साधु-संतों की वाणियों ने निरंतर व्यक्ति, समाज और राष्ट्र को नई दिशा प्रदान की है। इसी परंपरा में समाज और व्यक्ति की केंद्रीय चेतना के नब्ज़ को पकड़ते हुए कबीर दास जी ने भारतीय जन समुदाय के हिंदू और मुस्लिम वर्ग के वैचारिक खोखलेपन को उजागर कर नया रास्ता दिखाया। इस रास्ते को कबीर के समाज दर्शन के आलोक में ही जाना और समझा जा सकता है तथा यही मानव और समाज द्वारा आज भी अपनाने योग्य है।

'सुनो भाई साधो' उपन्यास हिंदी साहित्य के निर्गुण संत कवि कबीरदास जी के क्रांतिकारी व्यक्तित्व और तत्कालीन सामाजिक तथा सांस्कृतिक जीवन के द्वंद्व की गाथा है। पंद्रहवीं सदी के समाज की सामाजिक, राजनीतिक,धार्मिक और आर्थिक परिवेश के प्रति कबीर के क्रांतिकारी तथा फक्कड़ जीवन का चित्रण इस प्रकार लेखक द्वारा किया गया है कि उपन्यास का पाठक इक्कीसवीं सदी में रहते हुए इस सामाजिक जीवन के संघर्ष तथा द्वंद्व की अनुभूति आसानी से कर सकता है। कबीर दास के जीवन के समकालीन समाज के सापेक्ष आज भी मानव समाज विभिन्न प्रकार के सामाजिक गुलामी के बंधनों में सर्वत्र झकड़ा हुआ है। आज भी धर्म के ठेकेदार,स्वयं को प्रगतिशील तथा जननायक बताने वाले नेतागण बाह्य रूप से मानव मुक्ति, मानव समानता और एकता की भावना पर जोर देते हैं। वर्तमान में कबीर का समाज दर्शन एक पथ प्रदर्शक के रूप में विभिन्न सामाजिक कुरीतियों, अंधविश्वासों और सांप्रदायिक भावनाओं की टकराहटों,कर्मकांडों और जातिगत विषमताओं से संबंधित प्रश्नों के उत्तर देने में प्रासंगिक है।

बीज शब्द - अद्वैतवाद, समरसता, एकता,मानवता, प्रेम, व्यक्तित्व,समाज सुधारक, जनकल्याण

शोध विस्तार - कबीरदास जी अद्वैतवाद से प्रभावित होने के कारण सर्वत्र ईश्वर की उपस्थिति को स्वीकार करते हैं। 'मन चंगा तो कठौती में गंगा' की विचारधारा से प्रेरित कबीरदास जी गुरु रामानंद के जन्मोत्सव के दौरान कहते हैं "सदगुरु इस घाट पर हैं?..... उस मठ में हैं?.....मेरे दिल में है? राम की भगति में है? अपने बैरागी दल में हैं।"[1] तत्कालीन समय में अपना देश विभिन्न वर्णों तथा जातियों में विभक्त था। आज भी उच्च वर्ग और निम्न वर्ग दो विशेष जातियां हैं, जिनका विभाजन सामाजिक और आर्थिक आधार पर विशेष रूप से है। देश की विशालता की दयनीयता को स्पष्ट करते हुए कहते हैं "इतना बड़ा देश..... कामाख्या से द्वारिका तक..... बदरिका से रामेश्वर तक.....हताश है। जात-पात में बटाँ हुआ..... दबा हुआ..... मलवे पर बैठकर सिसकता हुआ देश है।..... बहुत बड़ा हिस्सा छोटी जातियों का है। हालत खराब है।"[2] इस प्रकार वर्ग भेद की संबंधी विसंगतियों को अखंड भारत निर्माण की दृष्टि से दूर करने की आवश्यकता है।

भारत में प्राचीन समय में शूद्र वर्ग की अत्यंत दयनीय स्थिति रही है। वे निम्न वर्ग के प्रति संवेदना व्यक्त करते हुए कहते हैं "अपने गांव टोलों में छोटे जन-शूदर लोगों को देखता हूं।उनके दर्द को महसूसता हूं,.....अपना भी ऐसा ही दर्द हो रहा है, गुरुदेव ने दर्द की दवा दी, तभी तो जी सका हूं।"[3] इस प्रकार के कथन द्वारा कबीर मानव का मानव के प्रति प्रेम भाव का पोषण करते हैं।आज हिंदू और मुस्लिम समाज में जो वैमनस्यता की खाई उत्पन्न हुई है उसे भरने के लिए प्रत्येक मानव के हृदय में सहानुभूति, दया,परदु:ख कातरता इत्यादि मानवीय मूल्यों को विकसित करना समाज सापेक्ष अनिवार्य है।

क्रांतिदर्शी कबीर राम और रहीम को अभेद मानते हैं। राम और अल्लाह के विभाजन की रेखा हिंदुओं और मुसलमानों द्वारा धार्मिक श्रेष्ठता को लेकर खींची गई। कबीर का कथन है "मेरा राम रहीम है। मेरा रहीम राम है। इसे न एक दूसरे से अलग कर सकता हूं और न छोटी हद में बंद रखना चाहता हूं।"[4] इस प्रकार वे समाज को संदेश देना चाहते हैं कि राम यानी ईश्वर धर्म,जाति,संप्रदाय इत्यादि की शब्द सीमा में पूर्ण रूप से न बांधे गए हैं और न ही बांधे जा सकते हैं।

कबीर मानव समाज से मानवता की एकनिष्ठ सत्य की उपासना का समर्थन करते हैं। वे लिखित भाषाबोध से स्वयं को अनभिज्ञ मानते हुए हृदय के गहन अनुभव को स्वीकारते हैं तथा विश्वास करते हैं। समाज सापेक्ष भाषिक व्यवहार की कुशलता उन्होंने सत्संग,पर्यटन और अनुभव द्वारा अर्जित किया था। मानवता की विचारधारा के प्रखर प्रसारक और समाज सुधारक व्यक्तित्व की प्रतिमूर्ति कबीर के बारे में हजारी प्रसाद द्विवेदी कहते हैं कि "वे मुसलमान होकर भी असल में मुसलमान नहीं थे। वे हिंदू होकर भी हिंदू नहीं थे। वे साधु होकर भी साधु (अगृहस्थ)नहीं

Akshardhara Research Journal
Single Blind Peer-Reviewed & Refereed International Research Journal
E ISSN -3048-8095 / Bimonthly / SJIF Impact- 3.4 September-October 2025 / VOL -02 ISSUE-II

थे। वे वैष्णव होकर भी वैष्णव नहीं थे। वे योगी होकर भी योगी नहीं थे। वे कुछ भगवान की ओर से सबसे न्यारे बनाकर भेजे गए थे।"[5] सत्योपासक कबीर ने अपनी करनी और कथनी को निरंतर अभेद रखकर जन सामान्य को अहिंसा, धर्मनिरपेक्षता तथा जीवन सुलभ मानवीय मूल्यों को आत्मसात करने का संदेश दिया। यह निश्चय ही आज व्यक्ति और समाज द्वारा ग्रहणीय है।

प्रेम के ढाई अक्षर के संदेशवाहक कवीरदास जी हिंदू वर्ग पर मुस्लिम शासको द्वारा किए जाने वाले आक्रामकता के संदर्भ में संत रविदास के साथ एक महत्वपूर्ण प्रश्न करते हुए कहते हैं "अपने देश का चप्पा-चप्पा ऋषियों- मुनियों और संतों से पाक पवित्तर है।..... पर दिल तो पाक पवित्तर नहीं हो सका। कोई ऊंचा है..... कोई जन्म से नीचा है। कोई सर है कोई पर है।.....ये तुरक तो सबसे ऊंचे हैं। सब पर हुकूमत कर रहे हैं। जब इनकी फौज चलती है तो हाहाकार फैल जाता है।..... रिषि-मुनि और देवी देवता रोक नहीं पाते हैं।.....यह क्या है।"[6] इस प्रकार हिंदू धर्म में विद्यमान वर्णाश्रम व्यवस्था का खंडन करते हैं। पंद्रहवीं सदी का यह चुनौती पूर्ण प्रश्न आज भी समाज के समक्ष एक अनुत्तरित है। सूफी फकीर अब्दुल्लाशाह से तत्कालीन समय में बढ़ते हुए फकीरों की संख्या के संबंध में फकीरों की कर्महीनता को ही कबीर उत्तरदायी ठहराते हैं। वे कहते हैं कि "कुछ लोग मेहनत से बचने के लिए फकीरी का बाना पहन लेते हैं।"[7] यद्यपि साधु फकीर दोनों के बनावटीपन पर प्रकाश डालते हैं।कबीर का यह संदेश आज भी प्रासंगिक है कि " इतने साधु फकीर घूम-घूम कर हर दरवाजे पर पहुंचकर इंसानियत का पैगाम देते हैं भगति की बात करते हैं लेकिन इंसानियत आगे नहीं बढ़ पाती है।"[8] आज भी समाज कुछ सूफी फकीरों के खोखली विचारों तथा चमत्कारों का श्रवण ही करता है। निरंतर अमीर-गरीब तथा हिंदू-मुस्लिम का अंतर विद्यमान है। इसे दूर किए बिना इंसानियत का विकास नहीं हो सकता है। तत्कालीन मुस्लिम आक्रांताओं द्वारा गैर मुसलमानों के साथ निरंतर अमानवीय पूर्ण व्यवहार किया जाता रहा। परिणामतः हिंदू वर्ग सदियों तक पीड़ित रहा। इस पर सर्वत्र समानता की वकालत करते हुए कबीर गैरमुस्लिमो के प्रति आक्रमणकारियों द्वारा किए जाने वाले कुकृत्य का प्रतिकार करते हैं।

कबीर का व्यक्तित्व समदर्शी है। इंसानियत की प्रतिमूर्ति कबीर एक नीची समझी जाने वाले जाति जुलाहा से संबंधित है। इसी कारण धर्म के ठेकेदार पंडित और मुल्ला-
मौलवी उनके विचारों को स्वीकार नहीं करते हैं। अधिकांश रुप से निम्न वर्ग तथा मध्यम वर्ग के लोग ही उनके अनुयायी बनते हैं। सुखदेव नामक पात्र कहता है "कबीरदास जुलाहा है। मुसलमान है लेकिन रामानंद का चेला है। वह हिंदू और मुसलमान में फर्क नहीं मानते हैं। दोनों को प्यार से डांटते हैं। दोनों को एक समझते हैं।"[9] धर्म और जाति से परे कबीर मानव धर्म की ही बात करते हैं। इस प्रकार कबीर हिंदू और मुस्लिम के सममिश्रित व्यक्तित्व द्वारा समाज में एकता की स्थापना पर बल देते हैं। इसी भाव के द्वारा समाज में एकता तथा भाईचारे की स्थापना वर्तमान समय में भी की जा सकती है।

संत और भक्त प्रवर कबीर मोह,माया,अहंकार, ईर्ष्या आदि से परे व्यक्तियों से निर्मित समाज की स्थापना के पक्षधर है,क्योंकि इसी से मानव मुक्ति भी संभव है। इन दोषों से मुक्त होकर ही मनुष्य लौकिक तथा परलौकिक जीवन को उन्नत बना सकता है। स्वयं को राम का दास स्वीकार करने वाले, पोथियों के ज्ञान से अनभिज्ञ तथा सत्संग को श्रेष्ठ मानने वाले कबीर पोखर और दरिया के रूपक द्वारा व्यक्ति और ईश्वर के एकाकार स्वरूप के बारे में कहते हैं "पोखर और दरिया में लहरें उठती हैं। फिर इसी में समा जाती हैं। यही तो राम और जीव का रिश्ता है। खुदा और बंदा में यही रिश्ता है, दोनों एक हैं।"[10] इस प्रकार कबीर समाज का पथ प्रदर्शन करने के साथ व्यक्ति के जीवन की अंतिम परिणति को भी स्पष्ट करते हैं।

हमारे बहुभाषाभाषी देश में तत्कालीन समय में भिन्न-भिन्न समाज किसी न किसी धर्म प्रेरित चादर के तले सांस ले रहा था। इसी की आड़ में हिंसा जैसी कुकृत्य भी धड़ल्ले से फलीभूत हो रही थी। पशु बली के नाम पर हिंदू और मुस्लिम दोनों वर्गों में हिंसा व्याप्त थी। इस पर कबीर का सारगर्वित अभिव्यक्ति दोनों वर्गों को फटकार लगाती है "रोजा में कुर्बानी..... इससे खुदा खुश होंगे? नहीं। उधर कुछ लोग देवी के आगे बलि देते हैं। कबीरदास ने इनको भी भला-बुरा कहा है।"[11] एक अन्य जगह भी वे कहते हैं "वे (मुसलमान) दूध देने वाली गायों को..... हिंदू बकरे को खा रहे हैं।"[12] व्यवसाय के संबंध में मरे हुए जानवरों की चमड़ी का प्रयोग करना अनुकूल जान पड़ता है तो दूसरी तरफ आदमी के भोजन इत्यादि के उपयोग हेतु जीवित जानवरों की गर्दन पर मुस्लिम कसाइयों द्वारा छुरी चलने को पाप की श्रेणी में घोषित किया जाता है। इस प्रकार की जीव हत्या आज भी अनवरत है। निश्चय ही कबीर की अहिंसात्मक वाणी समाज का पद प्रदर्शन करती है।

'निर्गुण राम जपो रे भाई' का उद्बोधन करने वाले कबीर श्रादभोज की निंदा करते हैं तथा इसके द्वारा व्यक्ति के आर्थिक पहलू पर पड़ने वाले नकारात्मक बिंदु की ओर भी इंगित करते हैं। एक तरफ कबीर हिंदू वर्ग में जाति-पाति के झमेले को समानता की दृष्टि से समाज विरोधी बताते हैं तो दूसरी तरफ मुस्लिम धर्म में स्त्रियों की स्थिति के बारे में कहते हैं "औरत के साथ इंसाफ नहीं होता। सुन्नत सिर्फ मर्द बच्चों की होती है..... औरत तो मुस्लिम नहीं बन पाती?"[13]

सामाजिक समानता के पक्षधर कबीर समाज सुधार द्वारा व्यक्ति को समाज में सामाजिक तथा आर्थिक दृष्टि से उन्नत रूप में जीवन व्यतीत करने का समर्थन करते हैं "सबको काम धंधा करके अन्न धन पाने का अधिकार मिला है। सबको परिवार पालने का अधिकार है। सबको पूजा

Akshardhara Research Journal
Single Blind Peer-Reviewed & Refereed International Research Journal
E ISSN -3048-8095 / Bimonthly / SJIF Impact- 3.4 September-October 2025 / VOL -02 ISSUE-II

पाठ का अधिकार है।"[14] इस प्रकार समानता के साथ जीवन निर्वाह करने तथा मांस और मदिरा से मुक्त खान-पान द्वारा व्यक्ति को पशुतर तथा पतनोन्मुख जीवन के स्थान पर प्रेमपूर्ण जीवन जीने का यह उद्घोष आज भी प्रासंगिक है।

घोसगांवा में गाय चराने और महुआ तोड़ने के प्रसंग में हिंदू पात्र चंदूलाल, सुखराम, रामलाल तथा मुस्लिम पात्र रमजान,अब्दुल,अहमद द्वारा उत्पन्न विवाद के निपटारे में पंचायत में गोचर को सार्वजनिक भूमि घोषित करना, पूजा तथा इबादत की पूर्ण आजादी, प्रेम से जीवन निर्वाह करना, गौ सेवा द्वारा द्रव्य प्राप्त करना इत्यादि को मानव धर्म घोषित करना समाज सापेक्ष ही है। कबीर ने जहां धर्म के श्रेष्ठ साधनाओं का समर्थन किया है वहीं धर्म के खोखले पक्ष से संबंधित धार्मिक कर्मकांडों का भी खंडन किया है। उन्होंने धर्म और समाज के आधार पर आपसी जुड़ाव का ही पक्ष लिया है। हिंदू धर्म देश का अपना धर्म है। इस्लाम धर्म बाहर से आया है परंतु दोनों में गुण और अवगुण विद्यमान है। जहां हिंदू धर्म में पूजा-पाठ व सोचने-विचारने की आजादी है तो वहीं जाति-पाति रूपी कमजोरी भी है। इसी तरह इस्लाम धर्म के फैलाव का माहौल कुछ हद तक अच्छा है, लेकिन इस्लाम के विस्तार के पीछे मुस्लिम शासको का दबदबा अन्य लोगों पर होना तथा अन्य धर्मावलंबियों को जबरन मुस्लिम बनाया जाना मानवता के अनुकूल नहीं है। धर्म का प्रचार-प्रसार बाह्या खौफ अथवा बलपूर्वक होने के स्थान पर प्रेम,मानवता, दया, सहिष्णुता इत्यादि गुणों के आधार पर होना चाहिए। मध्यकाल में हिंदू समाज का निम्न वर्ग का समुदाय विदेशी मुस्लिम आताताइयों के द्वारा बर्बरता पूर्ण अत्याचारों तथा हिंदू धर्म के भेदभाव के कारण धर्म परिवर्तन करने को विवश रहा। इसी धर्म परिवर्तन के कारण घोसगांवा तीन यादव रामू,सिद्धू, और मोहन क्रमशः रमजान,अहमद तथा अब्दुल बन जाते हैं। मुस्लिम धर्म स्वीकार करने पर भी उनके मन में हिंदूत्वपन ही कचोट रहा था। इस प्रकार नवमुस्लिम वर्ग और हिंदू वर्ग दोनों भारत के अपने हैं, गांव,खून और धंधे भी अपने ही देश के हैं। अलगाव होने से बाहरी ताकते हमारा शोषण निरंतर करेंगी। अतः इस अलगाववादी तथा संकुचित सोच की धारणा से हम भारतवासियों को सर्वथा सचेत रहने की आवश्यकता है।

निष्कर्ष - कबीरदास का व्यक्तित्व तत्कालीन इस्लामी हुकूमत,मुस्लिम फकीर तथा हिंदू धर्म से परे सच्चे मानव की प्रतिमूर्ति है। इनका समाज दर्शन इनके व्यक्तित्व का परिचायक है। कबीरदास जी जिस काल की परिधि में थे, वह सामाजिक और सांस्कृतिक टकराव का दौर था। ऐसे में मुस्लिम शासन के प्रभुत्व तथा हिंदू समाज की त्रस्तता तथा दयनीयता के बीच चट्टान की तरह खड़े होकर विभिन्न धर्मो के अंधविश्वासों तथा कर्मकांडों के प्रतिकूल सामाजिक समानता का उपदेश व्यावहारिक रूप से देना कबीर के व्यक्तित्व की निशानी है। कबीर अंत में कहते हैं कि "हर आदमी…… जीव में खुदा के दरसन करें, राम रहीम का भेद न करें।बाहमन उच-नीच की बात छोड़ें।…..नए संसार…… नयी दुनिया बनने दे।"[15] जन कल्याण हेतु निमित्त विभिन्न माननीय मूल्य प्रेम,करुणा, विश्वबंधुत्व,एकता तथा समरसता कायम रखने हेतु कबीर का समाज दर्शन भारतीय संस्कृति का अनमोल रतन है, जिसके प्रकाश के साए में पंद्रहवीं सदी के समाज ने लाभ प्राप्त किया,साथ ही आज वर्तमान में भी समाज में व्याप्त अमानवीय अंधकार को दूर कर नये आलोक मे प्रगतिशील व्यक्ति और समाज के निर्माण में महात्मा कबीर का समाज दर्शन हर दृष्टि से प्रासंगिक है।

संदर्भ सूची-

1. सुनो भाई साधो- शत्रुघ्न प्रसाद, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, संस्करण 2023, पृष्ठ-6
2. वही, पृष्ठ-8
3. वही, पृष्ठ-15
4. वही, पृष्ठ-15
5. हिंदी साहित्य का उद्भव एवं विकास- हजारी प्रसाद द्विवेदी,राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2021, पृष्ठ-75
6. सुनो भाई साधो- शत्रुघ्न प्रसाद, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, संस्करण 2023, पृष्ठ-66
7. वही, पृष्ठ-67
8. वही, पृष्ठ-68
9. वही, पृष्ठ-80
10. वही, पृष्ठ-111
11. वही, पृष्ठ-135
12. वही, पृष्ठ-156
13. वही, पृष्ठ-205
14. वही, पृष्ठ-224
15. वही, पृष्ठ-205